भारतीय कृषि सुधार में मददगार हो सकता है गुजरात मॉडल

तर्क-वितर्क

राहुल जैकब

इस वर्ष के आरंभ में गुजरात में आलू की बंपर पैदावार और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में उसकी जोरदार आपूर्ति ने कीमतों पर असर डाला और वे गिरकर 4 रुपये प्रति किलो तक आ गईं। स्थानीय किसानों ने जमकर विरोध जताया और आलू को राजमार्ग पर फैलाकर आवागमन ही बाधित कर दिया। राज्य सरकार ने हस्तक्षेप किया और अतिरिक्त आलू के भंडारण के लिए शीतगृहों की संख्या बढ़ाई। साथ ही किसानों को सब्सिडी दी गई ताकि वे अपनी पैदावार को उन राज्यों में भेज सकें जहां आलू की कीमतें बेहतर थीं। गुजरात के मुख्य सचिव डी जे प्रधान कहते हैं, 'यहां के किसान बहुत मुखर हैं और वे सरकार को निर्णय लेने पर मजबूर कर देते हैं। हमने बहुत जल्दी नए शीत गृहों की व्यवस्था कर दी।'

देश के विभिन्न इलाकों में जो कृषि संकट पैदा हो रहा है उससे हमें ऐसी ही तेज गति से निपटना होगा। वरना हालात और खराब होंगे। अक्सर जल्दबाजी में यह विचार जताया जाता है कि किसानों को खेती के दिक्कतदेह धंधे को छोड़कर उच्च उत्पादकता वाले कारखाने के रोजगार में जाना चाहिए। सवाल यह है कि अगर बड़ी संख्या में किसान यह बदलाव करने लगें तो उद्योग और सेवा क्षेत्र कितनी तेजी से उनके लिए रोजगार पैदा कर पाएंगे और कितनी जल्दी उनको इन कामों के लिए प्रशिक्षित किया जा सकेगा? तार्किक जवाब यही है कि इस काम में कई दशक लगेंगे।

इस बीच राज्य और केंद्र को यह कोशिश करनी चाहिए कि कृषि को और किफायती बनाने की कोशिश करनी चाहिए। पानी, बीज और उर्वरकों के किफायती इस्तेमाल के साथ-साथ भंडारण शृंखला का निर्माण करके ऐसा किया जा सकता है। जाने माने कृषि अर्थशास्त्री अशोक गुलाटी ने द इंडियन एक्सप्रेस में लिखा कि नीति निर्माताओं को इस अहम सवाल का जवाब देना होगा कि क्या कृषि जीडीपी के 2 फीसदी से कम रहते हुए कुल जीडीपी की 7 या 9 फीसदी वृद्धि दर स्वीकार्य हो सकती है।

कृषि क्षेत्र में अच्छी खबर गुजरात और राजस्थान से आ रही है। 21वीं सदी के पहले दशक में इन दोनों राज्यों में कृषि वृद्धि दर क्रमश: 9.8 फीसदी और 9.6 फीसदी वार्षिक रही। गुजरात में कृषि क्षेत्र की सफलता विनिर्माण की प्रगति की तुलना में अधिक उल्लेखनीय है। मेहसाणा में तेल मिल और धागे की फैक्टरी चलाने वाले दिलीप पटेल सरकार की कुछ पहल का जिक्र करते हैं। मसलन: किसानों के खेतों तक पानी पहुंचाने के लिए छोटी नहरों का निर्माण, कृषि संबंधी जानकारियां किसानों को देना, बेहतर बीज और उर्वरकों के लिए सब्सिडी देने के लिए कृषि महोत्सव का आयोजन, बीटी कॉटन और ड्रिप सिंचाई को बढ़ावा आदि इसके उदाहरण हैं। लगातार फलती-फूलती ग्रामीण सहकारी कंपनियां और बेहतरीन सड़कों के साथ बिजली की आपूर्ति वहां के ग्रामीण इलाकों की बढ़िया तस्वीर पेश करती हैं।

समस्या यह है कि औसत जोत का आकार महज 1.15 हेक्टेयर होने के कारण कई तरह की चुनौतियां सामने आती हैं। लेकिन चूंकि आधी आबादी कृषि पर निर्भर है इसलिए सरकार को सूखे के अनुकूल फसल लाने के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ रही है। इसकी वजह यह है कि इलाके में पानी की काफी कमी है। इतना ही नहीं सरकार को कृषि विपणन व्यवस्था में भी सुधार लाने की आवश्यकता है। देश में फसल बीमा व्यवस्था में भी सुधार जरूरी है। फिलहाल देश के बमुश्किल 5 फीसदी गेहूं किसानों का ही फसल बीमा 2012 में था। हाल ही में आई खबरों के मुताबिक किसान न केवल फसल बीमा से अनभिज्ञ हैं बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों की वित्तीय स्थिति भी इसके प्रतिकूल बैठती है। कई बार ऋण लेने के लिए रिश्वत देनी पड़ती है जबकि जिनके पास बीमा है उनके दावों का निस्तारण कई बार नौकरशाही के रवैये तथा कई अन्य वजहों से अटका रहता है, जैसा कि गुलाटी कहते हैं। आमतौर पर भ्रष्ट आचरण वाले पटवारियों द्वारा महीनों बाद किसानों के नुकसान का ब्योरा दिए जाने के बजाय सरकार को सैटेलाइट तस्वीरों की मदद से तत्काल नुकसान का आकलन करने की व्यवस्था करनी चाहिए। गुलाटी लिखते हैं कि ऐसा करने की तकनीक उपलब्ध है और अगर आज रात कहीं ओलावृष्टि होती है तो महज 24 से 48 घंटों के भीतर हर्जाने की राशि किसानों के खाते में भेजी जा सकती है। अगर ऐसा किया जा सका तो यह वित्तीय समावेशन की दिशा में बहुत ही अहम कदम होगा।

राज्य सरकारों को पानी की बरबादी रोकने की भी जरूरत है। गुजरात ने वर्ष 2004 में राज्य के उत्तरी इलाकों में बोरवेल पर रोक लगा दी थी जिसमें हाल में छूट दी गई है। देश में पानी की दिक्कत हर वर्ष बढ़ती जा रही है। समाचार पत्र मिंट में हाल ही में छपे एक आलेख के मुताबिक पिछली आधी सदी में देश में प्रति व्यक्ति स्वच्छ जल की उपलब्धता 3,000 घन मीटर से घटकर 1123 घन मीटर रह गई है। जिस तरह आज किसानों की आत्महत्या की घटनाएं सामने आ रही हैं वैसे ही कल पानी के लिए लड़ाइयों की खबरें आ सकती हैं।

हमें अपने किसानों को बेहतर अवसर प्रदान करने होंगे और यह भी समझना होगा कि बेहतर सिंचित खेत भी हमेशा किसानों का पेट नहीं भर पाते क्योंकि उनकी जोत का आकार बहुत छोटा है। इस क्रम में हमें खेती के साथ-साथ श्रम आधारित उद्योगों को भी बढ़ावा देना होगा। मसलन वस्त्र उद्योग, खिलौने और जूते-चप्पल उद्योग। ये उद्योग इस समय चीन से बाहर ठिकाना तलाश रहे हैं और हम उन्हें बांग्लादेश अथवा कंबोडिया से बेहतर माहौल मुहैया करा सकते हैं। सरकार को कृषि अर्थशास्त्रियों से लेकर कम कौशल वाले उद्योग और विनिर्माण क्षेत्र में रोजगार के विशेषज्ञों की मदद लेनी चाहिए। चीन में काम करने वाले भारतीय उद्योगपति भी सरकार की मदद कर सकते हैं क्योंकि उन्होंने भारत के बाहर विनिर्माण कारोबार स्थापित किया है। किसानों की आत्महत्या की लगातार सामने आ रही खबरें बताती हैं कि आगे हालात और बुरे हो सकते हैं। ऐसे में वक्त आ गया हे कि देश के राजनेता और प्रशासनिक सेवा अधिकारी हर संभव मदद के लिए एकजुट हो जाएं।

भारत-अफगानिस्तान एक-दूसरे की जरूरत

राष्ट्रीय सहारा, 2-5-15

विश्लेषण

डॉ रहीस सिंह

अफगान राष्ट्रपति अशरफ गनी भारत यात्रा पर ऐसे समय में आए हैं जब अफगानिस्तान में अस्थिरता की हल्की-सी हलचल दिख रही है। अफगानिस्तान फिर से आतंकवाद से घिरता दिख रहा है और दुनिया के तमाम देश व संयुक्त राष्ट्र जैसी वैश्विक संस्थाएं इस स्थिति पर चिंतित दिख रही हैं। अफगानिस्तान के दक्षिण सूबे जाबोल से लेकर कुंदूज और जलालाबाद तक इस्लामी स्टेट (आईएस), इस्लामी मूवमेंट उजबेकिस्तान (आईएमयू) और तालिबान अपना दबदबा बढ़ाने में कामयाब होते लग रहे हैं और इसे अब एशिया प्रशांत क्षेत्र के देशों पर खतरे के रूप में स्वीकृति भी मिलने लगी है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि राष्ट्रपति अशरफ गनी भारत किस उम्मीद से आए होंगे। यद्यपि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने उन्हें यह कहकर आश्वस्त किया है कि भारत और अफगानिस्तान के दिल सालों से जुड़े हैं, इसलिए भारत अफगानिस्तान का दर्द समझता है। फिर भी यहां पर दो सवाल उठते हैं। पहला यह कि क्या भारत अफगानिस्तान के साथ साझेदारी से उपजने वाली चुनौतियों से निपटने के लिए तैयार है, और दूसरा कि क्या अफगानिस्तान इस बात के लिए भारत को आश्वस्त कर सकता है कि वह अपने 'अविभाज्य भाई' (पाकिस्तान) के मुकाबले भारत को तरजीह देने को राजी है?

कभी दुनिया का चौराहा रही अफगानिस्तान की जमीन, पिछले दो दशक में महाशक्तियों के ग्रेट गेम का इस कदर शिकार बनी कि अब वह ऐसे दलदल में तब्दील हो गई जिससे यह देश निकलना चाहता है। दक्षिण एशिया के देशों और विशेषकर भारत के लिए भी जरूरी है कि अफगानिस्तान उस दलदल से बाहर आए। लेकिन इसमें सबसे बड़ी बाधा है- पाकिस्तान और आतंकवाद। अफगान नेतृत्व पाकिस्तान के प्रति भक्ति प्रकट करने के लिए विवश है, क्योंकि उसे भलीभांति मालूम है कि यदि वह पाकिस्तान से दूर जाएगा तो पाकिस्तान का वर्चस्व कमजोर होगा, लेकिन इसे बनाए रखने के लिए पाकिस्तान किसी भी हद तक जा सकता है। इसी वजह से अफगान नेतृत्व भारत के प्रति मैत्री संबंधों का इजहार मुक्त मन से नहीं कर पाता है। करजई से लेकर अशरफ गनी तक ने पाकिस्तान को कुछ ज्यादा ही तरजीह दे डाली। अशरफ ने भी अपने सुरक्षा बलों के प्रशिक्षण का कुछ दायित्व पाकिस्तान को सौंपा। यह उनकी बड़ी गलतियों में से एक है। हालांकि अशरफ गनी आतंकवाद से लड़ना चाहते हैं और उन्हें यह भलीभांति मालूम है कि भारत के सहयोग के बिना वे उससे नहीं निपट सकते। यही कारण है कि अपने भारत दौरे पर उन्होंने सबसे पहले आतंकवाद की कठोर शब्दों में निंदा की। उन्होंने स्पष्ट किया कि अच्छे व बुरे आतंकवादियों में कोई फर्क नहीं किया जाना चाहिए और उन्होंने इस बीमारी से लड़ने के लिए संयुक्त क्षेत्रीय व वैश्विक दृष्टिकोण का आह्वान भी किया। उल्लेखनीय है कि अमेरिका व पाकिस्तान लंबे समय से आतंकियों का अच्छे व बुरे में विभाजन कर उन्हें अलग-अलग दृष्टिकोणों से देखने की वकालत करते रहे हैं। इसे भारत खारिज करता रहा है। प्रधानमंत्री मोदी ने गनी के आह्वान का समर्थन किया और उन्हें आश्वस्त कराया कि भारत अफगानिस्तान के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने के लिए तैयार है। उन्होंने दक्षिण एशिया में अफगानिस्तान को संपर्क का केंद्र बनाने के गनी के दृष्टिकोण का भी समर्थन किया।

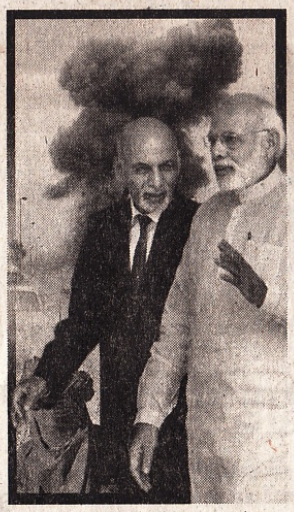

- अफगानिस्तान इस समय जिस ट्रैप में फंसा हुआ है उसका फायदा पाकिस्तान उठाना चाहेगा। इस समय पाकिस्तान वैसे भी दक्षिण एशिया का एक उभरता हुआ खिलाड़ी बनाया जा रहा है (चीन द्वारा), जिसका डिविडेंड वह अवश्य ही प्राप्त करना चाहेगा। इसे देखते हुए भारत को अपनी दक्षिण एशियाई नीति का ट्रैक बदलने की जरूरत होगी
- भारत को अफगानिस्तान के साथ साझेदारी करने से फिलहाल आर्थिक लाभ हासिल नहीं होंगे लेकिन सामरिक संतुलन के लिहाज से यह भारत के लिए लाभदायक होगा। इससे पाकिस्तान पूरब और पश्चिम, दोनों ही तरफ से भारतीय घेरे में आ जाएगा

दरअसल करजई शासन में अफगानिस्तान भारत की अपेक्षा पाकिस्तान की तरफ थोड़ा ज्यादा खिसक गया था। वह पाकिस्तान के साथ एकता का विशाल वृक्ष खड़ा करने की इस कदर चेष्टा कर बैठे कि उसे अपना 'अविभाज्य भाई' घोषित कर दिया। दरअसल पाकिस्तान नहीं चाहता कि अफगानिस्तान भारत की ओर झुके, इसलिए यह उसके मन की बात थी। हालांकि करजई को 'रियल पॉलिटिक' नेता के रूप में पेश किया गया, लेकिन अपने अंतिम फेज तक पहुंचते-पहुंचते वे इससे दूर चले गए। तो क्या अशरफ गनी अफगानिस्तान की 'रियल पॉलिटिक' समझ गए हैं? अगर ऐसा है तो क्या वे अफगानिस्तानी 'विदेश नीति की नई व्यवस्था' (न्यू ऑर्डर ऑफ अफगानिस्तान फॉरेन पॉलिसी) सुनिश्चित कर पाएंगे? महत्वपूर्ण बात यह है कि वे स्वयं आंतरिक चुनौतियों में उलझे हुए हैं। उनके सामने सबसे पहली चुनौती यही है कि गनी के घोर प्रतिद्वंद्वी अब्दुल्ला अब्दुल्ला प्रमुख कार्यकारी अधिकारी (सीईओ) की कुर्सी पर काबिज हैं। इससे राजनीतिक अनिश्चिता का वातावरण भी पनपता है। दूसरी चुनौती इसी का अगला सिरा है। यानी अफगानिस्तान का मौजूदा राजनीतिक ढांचा बेहद कमजोर है। खास बात यह है कि रक्षा मंत्री का महत्वपूर्ण पोर्टफोलियो अब तक रिक्त है। तीसरी यह कि अफगानिस्तान की आर्थिक स्थिति बेहद खराब है और वहां आर्थिक पुनरुद्धार की जरूरत है। चौथी चुनौती अफगान कबीलों के मध्य एकता बनाए रखने के साथ-साथ कानून व्यवस्था भी जरूरी है, क्योंकि अब तक वे अफगान कानून-व्यवस्था को स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। अंतिम चुनौती चीन-पाकिस्तान के छद्म कूटनीतिक उद्देश्यों से संबंधित है। ऐसे में अफगान राष्ट्रपति के लिए नई विदेश नीति की व्यवस्था सुनिश्चित कर पाना बेहद मुश्किल कार्य होगा। ऐसे में उन्हें भारत की मदद की दरकार होगी।

अफगानिस्तान इस समय जिस ट्रैप में फंसा हुआ है, उसका फायदा पाकिस्तान उठाना चाहेगा। इस समय पाकिस्तान वैसे भी दक्षिण एशिया का एक उभरता हुआ खिलाड़ी बनाया जा रहा है (चीन द्वारा), जिसका डिविडेंड वह अवश्य ही प्राप्त करना चाहेगा। इसे देखते हुए भारत को अपनी दक्षिण एशियाई नीति का ट्रैक बदलने की जरूरत होगी। भारत को अफगानिस्तान के साथ साझेदारी करने से फिलहाल आर्थिक लाभ हासिल नहीं होंगे लेकिन सामरिक संतुलन के लिहाज से अफगानिस्तान भारत के लिए लाभदायक होगा। यदि भारत अफगानिस्तान को सैनिक मदद देगा तो पाकिस्तान पोषित तत्वों को अफगानिस्तान में अनिश्चितता और अस्थिरता फैलाना मुश्किल हो जाएगा। इसका सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि पाकिस्तान पूरब और पश्चिम, दोनों ही तरफ से भारतीय घेरे में आ जाएगा। चूंकि चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के इस्लामाबाद दौरे के बाद पाकिस्तान के हौसले और अधिक बढ़े हैं, इसलिए अब भारत को प्रतितुलक नीति की विशेष आवश्यकता है। उधर चीन की अफगानिस्तान में भी अच्छी पैठ है और यह एक बड़े दानदाता के साथ-साथ अफगानिस्तान में निवेश करने वाला बड़ा खिलाड़ी भी है। इसलिए चीन का दबाव अफगान सरकार पर अधिक होगा और वह कभी नहीं चाहेगा कि भारत अफगानिस्तान में कोई सक्रिय भूमिका निभाए।

अब भारत को विकास और बुनियादी ढांचा निर्माण में सहयोग से आगे बढ़ते हुए अफगानी सुरक्षा संरचना में निर्णायक भूमिका में आना होगा, अर्थात अफगानिस्तान को न केवल 'गैर घातक' हथियार देने होंगे बल्कि अपने प्रशिक्षकों को भी भेजकर अफगान सुरक्षा बलों को प्रशिक्षित करना होगा। भारत को सामरिक संतुलन बनाने या चीन की काशगर-ग्वादर रणनीति को काउंटर करने के लिए जरांज-डेलाराम तक सड़क बनाने के बाद डेलाराम को रेल लिंक द्वारा ईरान के चाहबहार बंदरगाह से जोड़ना होगा। यद्यपि यह कार्य बेहद चुनौतीपूर्ण है, लेकिन सामरिक जरूरतें इसकी मांग कर रही हैं।

(लेखक विदेशी मामलों के जानकार हैं)

Don't Politicise LBA

India-Bangladesh boundary deal must be passed without exclusions

The Times of India, 4-5-15

With around a week left for the budget session of Parliament to conclude, a key pending legislative business is the ratification of the India-Bangladesh Land Boundary Agreement (LBA). The Constitution amendment bill that envisages the exchange of 162 Indian and Bangladeshi enclaves and fully demarcates the India-Bangladesh border has been hanging fire in Parliament since UPA days. Back then BJP had opposed this bill on the ground that it violated the basic features of the Constitution. After coming to power it did a welcome U-turn, with Prime Minister Narendra Modi himself asserting that LBA was in the country's long-term security interests.

However, recent reports that government plans to introduce the Constitution amendment bill by excluding the Assam portion of the LBA, involving just 268 acres, are disturbing. The irony is that the Assam government itself had made its support for LBA known. However, the BJP central leadership appears to have succumbed to the wishes of the state party unit that has been opposing the LBA with an eye on Assam assembly polls in 2016. But if Assam is excluded, Bengal CM Mamata Banerjee – who initially opposed LBA and had to be mollified to change her mind – would be under pressure to reconsider her support to the agreement.

And if Bengal reneges, it would scuttle LBA for good. Given that the parliamentary standing committee on external affairs has unanimously endorsed LBA, government could easily pass the Constitution amendment bill with opposition Congress support. Yet, it has chosen to politicise the issue for hypothetical and short-term electoral gains in Assam. Ratification of LBA would not only galvanise India-Bangladesh relations but also demonstrate to China that New Delhi is capable of settling long-pending border issues. Government must stop playing politics and ratify LBA without any exclusion.